प्रथम अध्याय

मिथक और नाटक

प्रथम अध्याय

मिथक और नाटक

मिथक : शब्दप्रयोग और परिभाषा :

शब्दप्रयोग :

विद्वानों का कथन है कि मिथक शब्द अंग्रेजी ' मिथ ' (Myth) से ही परिवर्तित होकर हिन्दी में आया है। 'मिथक " शब्द हिन्दी साहित्य में लाने का श्रेय आचार्य हजारी प्रसाद जी को जाता है। " मिथक अंग्रेजी के ' मिथ ' शब्द का हिन्दी पर्याय है। और अंग्रेजी का ' मिथ ' शब्द यूनानी भाषा के ' माइथॉस ' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है, ' आप्तवचन ' अथवा ' प्रतर्क्य कथन। "[1] तथा ' मिथक ' संस्कृत का सिद्ध शब्द नहीं है। संस्कृत में इसके निकटवर्ती दो शब्द हैं। 1) ' मिथस् ' या ' मिथ ' जिसका अर्थ है परस्पर और 2) ' मिथ्या ' जो असत्य का वाचक है। परंतु, वास्तव में ' मिथ ' के पर्याय रूप में मिथक शब्द के निर्माण में अर्थ-साम्य की अपेक्षा ध्वनि-साम्य की प्रेरणा अधिक रही है - अर्थात समानार्थक की अपेक्षा यह समान, ध्वन्यात्मक शब्द ही अधिक है। "[2]

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट होता है कि ' मिथ ' मूलतः अंग्रेजी का रूप है। संस्कृत का मिथ से कोई संबंध नहीं। अंग्रेजी में यह यूनानी का परिवर्तित रूप बनके आया है। शब्दकोशों में हिन्दी में मिथके के पर्यायवाची शब्द इसप्रकार दिये हैं। पुराणकथा, दन्तकथा, देवकथा, पुरावृतकथा, प्रतीककथा, कल्पितकथा इत्यादि। "[3]

इन सभी शब्दों में मिथक का कहीं न कहीं संबंध आवश्य है, परंतु वास्तव में मिथक इससे भिन्न अर्थ में तथा अपना अलग स्थान साहित्य में लिये हुआ है।

पुराणकाल में मिथक कथाओं में देवी-देवताओं के जन्म के बारे में जानकारी, उनके पूजा

का विधि-विधान आदि की जानकारी मिलती थी। उसका उद्देश्य केवल लोकरंजन ही नही था, बल्कि नैतिक शिक्षा, आचार-विचार शुद्धि और कौतुकमय क्रिया व्यापार की भी शिक्षा प्राप्त होती थी। ' वस्तुतः ' मिथ ' (पुरा कथा, पुराख्यान) सामुहिक मन की आकांक्षाओ, चुनौतीयों और संघर्षों की प्रमुख कथा है, जो देश, काल की सीमाओं में आबद्ध होकर रूढ़ हो जाती है, उसके रूढ़ अर्थ का आगामी युग के लिये कोई महत्व नहीं रह जाता। यदि इन प्राचीन 'मिथों' को आज भी ज्यों का त्यों रख लिया जाय तो उनका कोई महत्व नहीं। महत्व तब है, जब कोई प्रतीभा संपन्न व्यक्ति अपने युग के जीवन, (व्यक्तिगत तथा सामूहिक जीवन) के अवरोधों और सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक चुनौतीयों या आकांक्षाओं को ' मिथ ' के प्रतीकों, बिम्बो, पात्रों घटनाओं से ताल मेल बिठाकर देखता है। '[4]

इससे यह कहा जा सकता है कि वह प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति याने की कलाकार जैसे- लेखक, कवि, नाटककार अपनी प्रतिभा से पुराण के प्रतीकों को आज के युग में प्रतिष्ठित कर सकते हैं। पर आज जब कि मानव विज्ञान युग में आपूरित है मिथक मानने से इन्कार कर सकता है, पर वह नहीं कर रहा क्योंकि मिथक को लोकविश्वास प्राप्त हो चुका है।

मिथक मूलतः प्रासंगिक बिंब उभारकर सत्य में परिवर्तित होते हैं। इस प्रकार मिथक अतीत और वर्तमान के बीच का अंतराल काटनेवाला सेतुबन्ध ही है। यथार्थ के निकटवर्ती रहनेवाला मिथक प्रासंगिक होते हुए भी चिरंजीव है। आज भी यकायक मिथक का अस्तित्व अस्वीकार नहीं किया जा सकता। मिथक पुराण, इतिहास, धर्म, समाज, विज्ञान, आदि सभी में किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है।

मिथक कथाओं के पात्र भले ही अलौकिक, ऐतिहासिक या पौराणिक हो, उनमें अतिशयोक्ति भी पायी जाती है। मिथक परंपरागत जीवनधारा में बहता चला आ रहा है, और बहता ही रहेगा। यह अवचेतन मन का व्यक्तित्व होने से सर्वमान्य है। मिथक समाज में स्थित व्यक्तियों के अंतस से फूटकर समाज में ही बिखर जाता है। उसे साहित्य या कलाकार शब्दबद्ध करता है। अंर्तविरोध में स्थित संस्कृति, मान्यताओं का आधार, चारित्रिक अंर्तविरोध के पूँज का निराकरण करना ही मिथक का उद्देश्य है। सामाजिक आचरण का निर्णायक तत्व है जीवन-प्रणाली का समर्थन। और यह कार्य मिथक द्वारा बड़ी आसानी से किया जाता है। जीवन का नीजि व्यक्तित्व मिथक से निखरता है। मानव के अवचेतन मन से मिथक का सृजन होता है। मिथक का संबंध मानव-चेतना से होता है। इसप्रकार

मिथक रचना मानव-चेतना की एक सहज वृत्ति है। मिथक प्रकृति के साथ रागात्मक संबंध स्थापित करके साहित्यद्वारा मानव को क्रिया व्यापार करने में मदद करता है। इसप्रकार मानव-उसका अवचेतन मन, चेतन मन तथा क्रियाव्यापार एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। ' रूपगत सुंदरता को माधुर्य (मिठास) और लावण्य (नमकीन) कहना बिलकुल झूठ है, क्योंकि रूप न तो मिठा है, न नमकीन, लेकिन फिर भी कहना पड़ता है, क्योंकि अंतर्जगत के भावों को बहिर्जगत की भाषा में व्यक्त करने का यही एकमात्र उपाय है। सच पुछिये तो यही मिथक तत्व है। मिथक तत्व वास्तव में भाषा का पूरक है। सारी भाषा इसके बल पर खड़ी है। आदिमानव के चित्र में संचित अनेक अनुभूतियाँ मिथक के रूप में प्रकट होने के लिये व्याकुल रहती है। मिथक वस्तुतः उस सामुहिक मानव की भावना निर्मात्रि शक्ति की अभिव्यक्ति है। जिसे कुछ मनोविज्ञानी ' अर्किटाईपल इमेज ' (आद्यबिम्ब) कहकर संतोष कर लेते हैं। '5

कलाकार की शक्तिसंपन्नता का अंदाजा लगाना कठिन कार्य है। क्योंकि कहावत है, ' जो न देखे रवि - वो देखे कवि। ' कवि अपनी कल्पना सामर्थ्य पर सब कुछ कर सकता है।

मिथक की परिभाषाएँ बहुत कम मात्रा में उपलब्ध होती है।-

एरिस कालहर ने मिथक की परिभाषा इस प्रकार की है -

' मिथक सत्यदर्शन के उन समस्त रूपों का समष्टि का नाम है जो प्रयोग और प्रमाण से सिद्ध नहीं किये जा सकते, जो अनुभव और तर्क से परे हैं। '6

मालतीसिंह की परिभाषा इसप्रकार है -

' मिथक आदि मानव का विज्ञान है, वह विश्व की व्याख्या का प्रयत्न है, जिसमें आदिन मानव निवास करता था। मिथक आदिम मानव का दर्शन है। '7

डॉ. नागेंद्र के अनुसार ' मिथक मूलतः आदि मानव के समष्टि मन की सृष्टि है जिसमें चेतना की अपेक्षा अवचेतन प्रक्रिया का प्राधान्य रहता है। '9

डॉ. बच्चनसिंह की परिभाषा में मिथक का स्वरूप अधिक स्पष्ट होता है जो इसप्रकार है। ' मिथक आदिम मनुष्य की भाषा है जिसके माध्यम से वह जीवन और प्रकृति के रहस्यों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं को अलौकिक गाथाओं के रूप में अभिव्यक्त करता था। यह अदिम यथार्थ के प्रति सामुहिक अवचेतन मन का सहज स्फूर्त बिम्बात्मक सृजन है। '10

उपर्युक्त परिभाषाओं के परिशीलन से निम्नलिखित तत्व स्पष्ट होते हैं -

अ) मिथक सर्वभौम कल्पना है।

ब) मिथक आदि-मानव की सामुहिक अनुभूतियों का लोकविश्वास का आद्य बिंब रूप है।

क) मिथक के मूल आधार में प्रकृति के विविध रूपों का तथा अद्भूत घटनाओं का संमिश्र रूप दिखायी देता है, जिसे आदि-मानव ने सहज ही अपनाया है।

ड) मिथक का रूप कथात्मक होता है, जो कथा कि विभिन्न मानवीय, अतिमानवीय या प्राकृतिक घटनाओंपर निर्भर करता है। मानव मन के अंतर का वह सहज प्रकटीकरण है।

ई) मिथक में कल्पना और सत्य का निर्वाह होता है।

फ) मिथक किसी भी देश के जातीय संस्कृति के संवाहक होते हैं।

उपर हमने मिथक की परिभाषा तथा उसके तथ्य देखे। हमारे खयाल से मिथक की परिभाषा इस प्रकार हो सकती है -

' आदि-मानव के अंतःपटल पर वस्तुजगत का जो बिंब अगर उभर गया, जिसे प्रतीक बनाकर अपनी कल्पनाद्वारा कथारूप देकर, लोकविश्वास प्राप्त हुआ उसे मिथक कहा जा सकता है। '[11]

मिथक का संबंध केवल आदिम-मानव या आदि मानव से न होकर प्रतीक, बिंब, प्राकृतिक-क्रिया-व्यापार, रूपक, भाषा, समाज साहित्य, कल्पना तथा विज्ञान से भी जुड़ा है। मिथक को काव्य का निकटवर्ती भी कहा जा सकता है। मिथक की अर्थवत्ता आदि काल से लेकर जीवन के अन्ततक बनी रहेगी, तथा हमेशा इसमें नये-नये प्रयोग आते रहेंगे।

मानव जीवन आदि काल से अध्यात्मवाद पर ही आधारित है। अध्यात्मवाद में लौकिक तथा अलौकिकता का समावेश रहता है। लौकिक तथा अलौकिकता की सीमारेषा को पहचानने के लिये मिथक सहायक बन जाता है। धर्म की आड लेकर मिथक सत्योद्घाटन का प्रयास करता है। बुद्धिप्रामाण्यवाद की आड लेकर कुछ लोग मिथक को या मिथक कथाओं को असत्य, अभासमात्र सिद्ध करने का भी प्रयास करते हैं। परंतु परंपरा तथा रूढ़ि को तोडना इतना आसान काम नही है। हाँ, यह सही है, कि परंपरा का जो अंश जीवन के लिये अनुपयुक्त साबित हो जाता है उसकी जगह आधुनिकता या नवीनता होती है। नवीनता श्रे भी है और यह नवीनता भी कालान्तर में परंपरा बन जाती है।

भारतीय संस्कार ही अध्यात्मवाद पर निर्भर है। आदि स्रोतों से बहता आया मिथक अपनी सापेक्षता में यथार्थ और प्रासंगिक भी है। मिथर में धार्मिकता प्रचुर मात्रा में पायी जाती है, जो कभी कभी मानव को यथार्थ मानने पर मजबूर करती है।

मिथक : उत्पत्ति और विकास :

युग-युगान्तर से चलती आयी यह सृष्टि किस प्रकार शान्त हो गयी, इसकी जानकारी हमें भूगोल से मिलती है। मानव जन्म के साथ ही मिथक का भी जन्म हुआ है। त्रेतायुग, द्वापारयुग, सतयुग इसप्रकार युग के पीछे युग चले आये और समाप्त हो गये। अब कलयुग चल रहा है वह भी एक दिन समाप्त हो जायेगा।

द्वापार युग में महाभारत की निर्मिती ऋषि व्यासजी ने कि तो सतयुग में रामायण की निर्मिती महर्षि वाल्मीकी जी ने की। ये सारी बातें पुराणों का आधार मानकर ही बतायी जा सकती है।

रामायण तथा महाभारत की कथाएँ हम अपने पुरखों से सुनते आ रहे हैं, जिसके लिखित रूप भो आज आसानी से प्राप्त होते हैं। इन कथाओं का परिणाम हमारे सामान्य जन-जीवन पर भी होता है। जिसे हम मिथकीय संवेदना कह सकते हैं। मिथक तो पुराकाल से साहित्य में, पुराण में विद्यमान है, पर उसका महत्व हम आधुनिक काल से जानते हैं। दुख की बात है कि मिथक का रहस्योद्घाटन पाश्चिमात्य विद्वानोंद्वारा किया गया, बाद में इसे हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठा मिली।

' 1956 में हस्तिनापुर की खुदाई में पांडवों के पांचवे वंशज निचक्षु के युग के खण्डहर में मिल गये। इससे यह सिद्ध होता है कि, पुराण या महाभारत में अंकित हस्तिनापुर पर टिड्डियों के आक्रमण तथा गंगा के बाढ़ की कड़ी मिलती है। '[11] अधुनातन ऐतिहासिक खोजों के आधारपर महाभारत का युद्ध राजा नंद से 1015 अथवा 1050 वर्ष पूर्व हुआ था। आर्यभट्ट ने भी ज्योतिष परंपरा के अनुसार 3102 वर्ष इसा पूर्व कलियुग का आरंभ माना है।

इस प्रकार मिथक की उत्पत्ति मानव जन्म के साथ हुयी। उसका विकास भी मानवीय विकास के साथ माना जा सकता है। मिथक की अवधारणा किस प्रकार मानव मन में निर्मित हुयी होगी इसका अच्छा उदाहरण हम आकृती सहित देख सकते हैं। यदि पुराण मिथक नहीं है फिर भी मिथक की प्रेरणा या उसका स्त्रोत पुराण से ही प्राप्त हुआ है। वैसे तो मिथक संस्कृति के वाहक कहें जा सकते हैं। भगवान की कुछ मूर्तियाँ भी मिथक का आधार बनी है। जैसे श्रीराम की मूर्ति, शिवलिंग,

आम्बा माँ की मूर्ति आदि।

डॉ. गजानन सुर्वे ने प्रकृति की पृष्ठभूमि पर मिथक-कल्पना को इसप्रकार आरेखित किया है।[12]

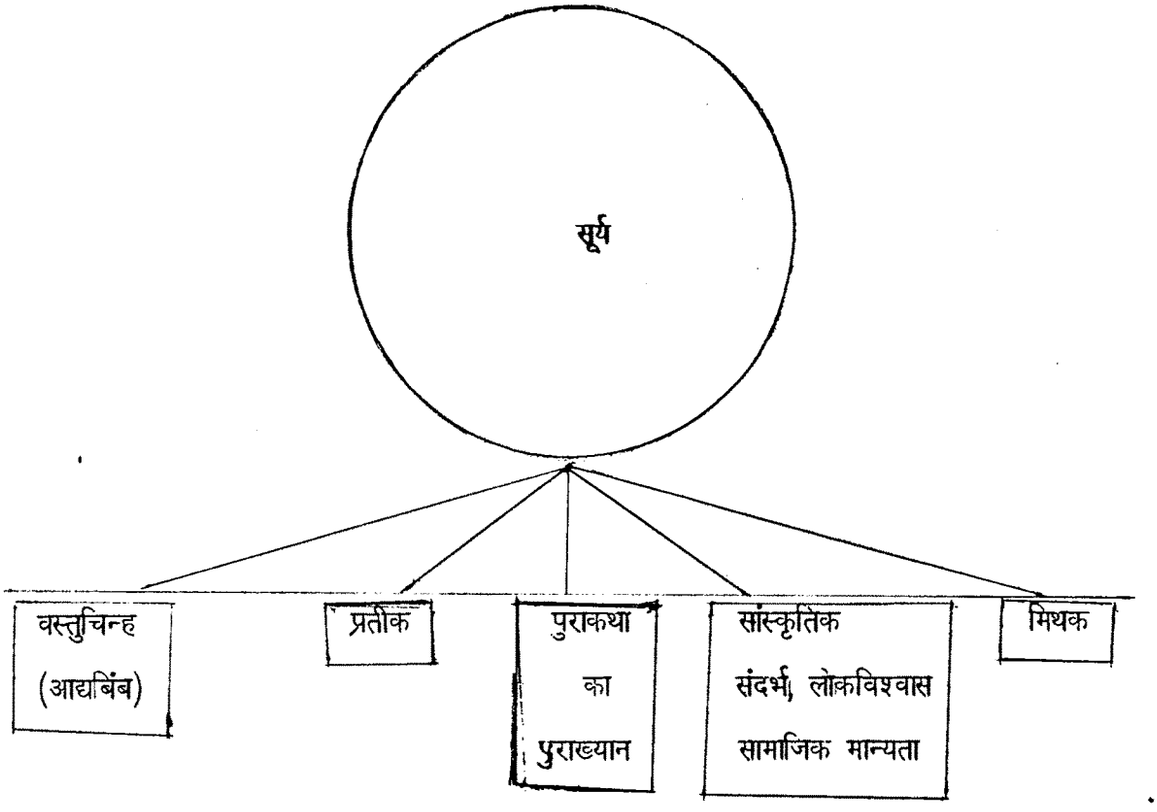

उपर्युक्त आकृति से मिथक की उत्पत्ति मानव के द्वारा समाज में किस प्रकार प्रतिस्थापित हो गयी इस बात का पता चलता है। मिथक साहित्य कपोल कल्पित नहीं माना जा सकता। कथाओं की आलौकिकता मिथक को भले ही कपोल कल्पित समझे पर मिथक को सांस्कृतिक सन्दर्भ, लोकविश्वास तथा सामाजिक मान्यता अवश्य मिल गयी है।

मिथक केवल इतिहास या पुराण में नहीं पाये जाते, मिथक तो सामान्य जन-जीवन में जीया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अलग अलग अनुभूति है। इसलिये मिथक का महत्व, शक्ति अनिवार्य रूप में हमारे जीवन में है।

पुराण काल से मिथक साहित्य में आज भी विद्यमान है, पर आधुनिक मिथक समय-समय पर बदलते हैं, उसकी छबी मानस पटल पर उभरते-उभरते मिट भी जाती है। मिथक विज्ञानद्वारा

परिवर्तित होकर विकसित हो गया। पुरा कथाएँ हर पीढ़ी में सुनती-सुनाती आयी और लिखित रूप में भी जीवित है। परन्तु आज रेडियो तथा दूरदर्शन पर जो कथाएँ सुनायी या दिखाई जाती है वह तत्कालिक रूप में होती है - इसलिये यह कथाएँ दीर्घ काल तक मानस-पटल पर बिंबित नहीं हो पाती।

मिथक का सम्बन्ध मानव-मन से है, मानव मन का संबंध प्रकृति से है और मिथक का सबंध प्रकृति से है - इसप्रकार मानव मन प्रकृति तथा मिथक परस्पर संबंधित है। मिथक का मूल प्रागैतिहासिकता में है, पर उसकी उपस्थिति समाज में है। मिथक मानव की जातीय धरोहर है। पर वह समाज में उद्घाटित होने की वजह से सामुहिक भी हो सकती है।

आदिकाल में मिथक को दर्शन के रूप में देखा गया, माना गया जैसे - सूर्य, चंद्र, नदी, पर्वत आदि सृष्टि के तत्व। जैसे-जैसे काल बीतता गया यही मिथक सामान्य जन-जीवन पर परिणामकारक बन गये। और धीरे-धीरे मिथक सामान्य जन जीवन में घुलमिल से गये। जैसे सूर्य चंद्र को देवता के रूप में स्वीकार किया गया। बाद में वैज्ञानिकों ने तथा विद्वानों ने भी उसका महत्व जान लिया।

मिथक का संबंध नृत्य-कला, संगीत कला, चित्रकला, वास्तुकला आदि सभी के साथ प्रस्थापित है। इतना ही नहीं रामायण महाभारत जैसे महाकाव्यों की महानता ही मिथक का निजत्व है। भारतीय परंपरा का महत्व तथा दर्शन मिथक साहित्य में होता रहा, वह भी अलौकिक रूप में। लौकिक संदर्भ तथा अलौकिक आख्यान का समन्वय भारतीय देवलायों में देखने को मिलता है। देवालयों में विष्णु, महेश, हनुमान, अम्बामाता, कालिमाता आदि के मूर्तियों के दर्शन होते हैं। इन मूर्तियों का सजीव चित्रण लेखक-साहित्य की ठोस ऐतिहासिक नींव का परिचायक है।

आधुनिक काल का मिथक उद्देश्यपूर्ण तथा उपयोगी सिद्ध हुआ है। पुराण के मिथक स्वप्नवादी एवं आदर्शवादी थे, परन्तु आज के मिथक प्रगति का प्रतीक बनकर हमारे सामने आये हैं। आज के मिथक के विषय हैं - मौसम, भाषणबाजी, खेलकुद, आंदोलन, युद्ध, आतंकवाद, अखबार, रेडियो, दूरदर्शन आदि। पुराणकाल के मिथक दीर्घजीवी थे, जब की आज के मिथक तत्कालिक।

मिथक और समाज :

मिथक और समाज का अटूट सम्बन्ध है। मिथक समाज से तथा समाज मिथक से अभिन्न

है। पुराण काल से लेकर आजतक मिथक साहित्य में इतिहास में, मनोविज्ञान में धर्म में राज्यव्यवस्था में तथा प्रमुखतया समाज में विद्यमान है। साहित्य में मिथक का स्थान अद्वितीय है। साहित्य का समाज में स्थान अद्वितीय है, इसप्रकार मिथक और समाज का संबंध भी अद्वितीय है।

जनमानस की कल्पनाएँ, भावनाएँ तथा क्रियाएँ समाज के जरिये कथित होती है। समाज व्यक्ति का वह रूप है, जो व्यक्ति अपने से पृथक समजती है, पर वास्तव में व्यक्ति का प्रतिबिंब, व्यक्तित्व, समाज में ही उभरता है। मिथक मानवीय जीवन का प्रमुख आधार है। मिथक कथाएँ समाज के व्यक्ति से ही संबंधित होकर कथा का घटनाक्रम भी उससे सम्बद्ध है। मिथकीय कथाओं का संबंध मानव के सांस्कृतिक जीवन से सम्बद्ध रहता है। " ब्रोनिस्ला मासिनोवस्की ने मिथक को सामाजिक चार्टर कहते हुए लिखाया, ' मिथक पवित्र सामाजिक परंपराएँ है। जो वर्णनात्मक स्तरपर संस्कृति के भीतर मानवीय विश्वासों, क्रियाअनुष्ठानों तथा नैतिक आचरण की पद्धतियों का उद्घाटन करती है। प्रत्येक मिथक स्वाभाविक रूप में साहित्यिक अंतर्वस्तु है। वर्णनात्मक कथा का अर्थ भी साधारण मनोरंजक कथा अथवा व्याख्यात्मक वक्तव्य नहीं है। "[13] समाज के परंपरा का चित्रण मिथक कथाओंद्वारा होता है। वैदिक कालीन समाज रूढ़ि एवं परंपरा प्रिय था। रामायण महाभारतकाल का समाज मनोविज्ञान से सम्पृक्त था, पर कुछ हिस्सा पिछडा हुआ था। आज का समाज विज्ञान में जीता है, फिर भी रूढ़ि तथा परंपरा को यकायक तोड़ना कठीण हो गया है। विज्ञान के आधारपर समाज में परिवर्तन आ गये। लोग बुद्धिप्रामाण्यवादिता अंधःविश्वास निर्मूलन ऐसी बातोंपर जोर देकर अपने आपको बदलने का प्रयास कर रहे हैं, पर समाज के हर व्यक्ति को उसमें सफलता मिलेगा या नहीं यह तो समय ही बतायेगा।

लोकविश्वास के आधारपर मिथक कथाएँ प्रचलित हुयी। लोककथा का इसमें समावेश रहता है, पर वे तत्कालिक रूप में उभरती है और समाज उन कथाओं को भूल जाता है। मिथक कथाएँ चिरंजीव रहती है। समाज के हर स्तर पर मिथक दृष्टिगोचर होता है। आधुनिक काल की कथाओंद्वारा भी मिथक गढ़ता जा रहा है। सामाजिक जीवन का मिथक समाज के व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है।

जैन तथा बौद्ध लोग तंत्र-मंत्र को मानते हैं। पर उनका परमेश्वर के अस्तित्व पर भी विश्वास है। भारत के त्यौहार, उत्सव आदि बातें धार्मिक होते हुए भी आज भी मनाये जाते हैं - इसका मतलब समाज में आज भी धर्म को उतना ही स्थान है जितना आदिकाल में था। हर उत्सव तथा

त्यौहार के पीछे एक मिथक कथा आवश्य पायी जाती है।उदा. अश्विन मास की दशमी का त्यौहार - कहा जाता है - उस दिन पांडवों ने अपना बनवास समाप्त करके आपने घर शस्त्रसहित प्रवेश किया था। उन्होंने अपने शस्त्र ' आपटी ' नामक वृक्ष पर रखे थे, जिसके पत्ते आज भी उसी दिन हर घर में बाँटे जाते हैं और अवजारों की या शस्त्रों की पूजा की जाति है।

' दिवाली जैसे बड़े त्यौहार के पीछे हर दिन की अलग कथा पाई जाती है। नरकचतुदर्शी को नरकासुर राक्षस का नाश हुआ। बली प्रतिपदा को बली नामक दानी को पाताल में गाढ़ दिया था तथा भैय्यादूज के दिन यम-यमी भाई बहन माने जाते थे तो यमी ने वर माँग लिया कि उस दिन मृतव्यक्ति को यमयातना नहीं होगी। आज ये सारे त्योहार तथा व्यवहार ज्यों के त्यों मनाये जाते हैं। समाज के लोकविश्वास का यह अच्छा उदाहरण है। मिथक कथाओं में घटना नायक से साथ जुड़ी रहती है। एखाद जटिल विषयवस्तु मिथक कथाओंद्वारा मानवी मन पर बिंबित की जाती है। मिथक किसी घटना या पात्र के माध्यम से साहित्य में अपना स्थान बनाये रहते हैं। ये पात्र-घटनाएँ समाज निर्मिती नहीं तो और क्या है ?

मिथक और मनोविज्ञान :

मिथक का निकटवर्ती संबंध मानव के मन से है। मनोविज्ञान एक विशाल संप्रदाय है। उसपर गहराई से विचार-विमर्श करना कठिण कार्य है। इधर कुछ विद्वानों ने मनोविज्ञान में आद्यबिंब, स्वप्न तथा फंटासी के संदर्भ में मिथक की विस्तृत चर्चा की है। " कार्लयुंग का कथन है कि, ' ' आदिम मनुष्यों में मिथक का अन्वेषण नहीं, उसकी अनुभूति की। ये भौतिक प्रक्रिया में रचित रूपक है। इनमें एक अर्थ संगुफित रहता है। ' उसमे सामूहिक अचेतन की अंतस्तता को आद्यरूप कहा और मिथक को इन्ही की अभिव्यक्ति माना। "[14] पाश्चिमात्य कई विद्वानों ने मनोविज्ञान पर विचार विमर्श किया है। जैसे - फ्रायड़, कासिरर, नीत्शे, युंग आदि कई। उनके मत से समग्र सांस्कृतिक जीवन में मिथक की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। आदि मानव मिथक को पहचान नहीं सका, क्योंकि मिथक मानव के अंतजर्गत् की निर्मिति है। बाह्य जगत् या वस्तु जगत् पर सोचना उसके बस की बात नही थी क्योंकि बुद्धि संकुचित थी। धीरे-धीरे बुद्धिप्रगल्भता विस्तारीत होती गई।

मिथक पूर्ण रूप से मानसिक व्यापार से सम्बन्ध है। मिथक का संबंध भौतिकता से केवल कथाओं द्वारा ही जोड़ा गया। वास्तव में मिथक बताने, जताने या पढ़ने-लिखने की वस्तु नहीं, वह तो

केवल अनुभूतिपर ही आधारित है। पुराण कालका जनसमाज आत्मपरक था, उनके लिये मिथक का आस्वादन आत्मानुभूतिपरक था।

अचेतन मन दमित भावनाओं का शिकार था। यही दमित भावनाएँ, चेतन मन द्वारा उजागर हो गयी। दमित भावनाओं में वासना, इच्छा, लालसा रहती है, तो चेतन मन द्वारा उसका उद्रेक करके उसकी कार्यपूर्ति की जाती है। चेतन मन तथा अचेतन मन मानव के हृदयस्थ ही रहते हैं। अचेतन मन की दमित भावनाएँ स्वप्न या दिवास्वप्न द्वारा पूरी की जाती है। व्यक्ति को अगर इन भावनाओं में से कुछ भावनाओं की पूर्ती संभव है तो वह चेतन मन द्वारा करता है।

मिथक मानव के मन-तक ही सीमित रहते, पर साहित्य ने, कलाकारों ने इसे मनोविज्ञान के अध्ययन के आधारपर मूर्त रूप दिया है। मनुष्य के मन की छवी आकांक्षा तथा कार्यपद्धती मिथकद्वारा ही प्रकाशित होते हैं। व्यक्ति समाज में रहती है, समाज में घटित घटनाओं का व्यक्ति पर परिणाम होता है, पर व्यक्ति के मन में जो रूढ़ि या परंपरा के आद्यबिंब रहते हैं वे आसानी से नहीं मिटते। व्यक्ति के अचेतन मन में चेतन मन इतनी क्षमता नहीं, विचार करने की दृष्टि भी नहीं है।

मिथक मानव का मनोवैज्ञानिक सत्य तो है ही, पर मिथक के माध्यम से आदि-मानव की मानसिक सच्चाईयों का उद्घाटन भी होता है। मिथक मानव जाति की इच्छाजन्य चमत्कृति है। जागृत अवस्था में मानव के - व्यक्ति के उपर - जो बंधन रहते हैं, वे समाज के नियम के रूप में रहते हैं। व्यक्ति को समाज में रहना पड़ता है, इसलिये व्यक्ति के बाह्यजगत् से संबंधित घटनाएँ तथा कार्यव्यापार अंतः चेतना से अलग रहते हैं। मिथकों का निर्माण व्यक्ति के अंतस्थ भावनाओं तथा बाह्य घटनाओं के आधार पर ही होता है।

सामान्य जन-जीवन की घटनाओं का प्रभाव व्यक्ति के मन पर पडता है। भावनात्मक प्रवृत्ती को रोककर या बदल कर व्यक्ति समाज में व्यवहार करता है। मिथक की निर्मिती मानव-मन के अंतर्गत व्यापार तथा बाह्य व्यापार के सामंजस्य पर अवलंबित रहती है। मानव-मन बिंब रूप में या प्रतीक रूप में अपने मन की भावनाओं को कथारूप में गढ़ता है और वही कथा मिथक बन जाती है। समाज की सभ्यता, नियमों का उद्घाटन मिथक कथाओं में होता है, पर व्यक्ति के आद्यबिंब इन कथाओं में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। ये आद्यबिंब कलात्मक नहीं होते, कलाकार अपनी कला के माध्यम से इसे कलात्मक बना देते हैं। मिथक कथा का प्रस्फुटन कलाकार के अंतर्जगत में होता है, फिर विचारों के

आधारपर साहित्य के माध्यम से ये कथाएँ साहित्य तथा समाज में विकसित होती है।

आद्यबिंबों का संबंध मनुष्य के सांस्कृतिक जीवन में रहता है। सांस्कृतिक जीवन का संबंध समाज से रहता है। अंतः चेतना बाह्य चेतना से टकराती है। व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से जितना स्वतंत्र रहता है, उतना सामाजिक रूप से नहीं रहता। चेतन मनद्वारा किये गये कार्यव्यापार अवचेतन मन के अनुकूल होते हैं। पर कभी कभी अचेतन मन दमित भावनाओं का शिकार बन जाता है। ये दमित भावनाएँ मन में सुप्तावस्था में रहती है। इन भावनाओं का कार्यव्यापार चेतन मन द्वारा अधूरा रह जाता है, तो वह स्वप्नावस्था में व्यक्ति पूरा करती है। स्वप्नवत्, जगत में व्यक्ति के केवल अंतर्व्यापार का ही जोर रहता है। चेतन मन से असंभव कार्य या समाज के लिये घटनाबाह्य कार्य अवचेतन मन स्वप्ना अवस्था में करता है। उस समय व्यक्ति निद्रावस्था में होने के कारण अंतर्मन पर बुद्धि का नियंत्रण नहीं रहता।

स्वप्नावस्था में मिथक की अनुभूति होती है, व्यक्ति उस घटना का सीधा संबंध अपने व्यक्तिगत जीवन से लगाता है। फंतासी भी इसी धरातल पर व्यक्ति के जीवन से जुड़ी रहती है। फंतासी का मतलब है दिवास्वप्न। व्यक्ति समाज विरोधी कार्य, या परंपरा विरोधी कार्य फंतासी में करता है। कलाकार अपना यह अमूर्त कार्य कथा के रूप में समाज के सामने रखता है। यही मिथक कथाएँ बन जाती है।

फंतासी को प्रस्तुत करते समय व्यक्ति ज्यादा चौकन्ना रहता है। इसलिये फंतासी थोडी जटिल हो जाती है। वयस्क व्यक्ति फंतासी को सुघटित रूप में प्रस्तुत कर सकती है। इसका कारण उस व्यक्ति का अनुभव। बालकों या युवकों की फंतासी परीकथा या राक्षस कथा तक सीमित रहती है। ये कथाएँ काल्पनिक होते हुए भी कभी कभी यथार्थ के निकट रहती है। कलाकार कभी कभी फंतासी का उपयोग अपने व्यवसाय के लिये करता है। फंतासी द्वारा निर्मित कृती जन-मानस को अलग दुनिया की सैर कराती है।

व्यक्ति की भावनाएँ दमित स्थिति में हो तो वह फंतासी द्वारा ही प्रस्फुटित हो सकती है। पर आज समाज बदल गया हे। जाँति-पाति-व्यवसाय भेद सब को समानता प्राप्त हो रही है। युंग का कथन हे कि, हमे वास्तव में बहुत पहले ही अनुमान लगा लेना चाहिये था कि मिथक मनःतत्वों को प्रकट करते हैं। मिथक का उगमस्थान ही मानव मन है - और इसीलिये मिथक तथा मनोविज्ञान

केवल परस्पर पूरक ही नहीं, अपितु सहायक तथा आवश्यक भी है।

मिथक और इतिहास :

विद्वानों का मत है कि, मिथक तथा इतिहास दो परस्पर विरोधी अर्थवाले तत्व है। मिथक में जो कथाएँ-पुराकथा पुराणकथा - वर्णित रहती है उनका इतिहास से ज्यादा समाज से तथा समाज के लोगों की भावनाओं से संबंध रहता है। मिथक कथा वास्तव में जन-सामान्य में घटनाएँ नहीं होती। मिथक का संबंध भावनाओं से तथा इतिहास का संबंध सत्य से होता है। मिथक का संबंध सत्य से कितना है यह नहीं बताया जा सकता पर इतिहास का संबंध सत्य से होना अत्यंत जरूरी है।

' राम ' अवतार के रूप में स्वीकार किये जाते है, श्रीकृष्ण भी अवतार के रूप में ही स्वीकारे जाते हैं। फिर भी इनके जन्मसमय बताये जाते है - इससे यह सिद्ध होता है कि मिथक में अवतारवाद को मान्यता प्राप्त हो गयी है। इस प्रकार मिथक तथा इतिहास का संबंध जोडना मुश्किल है तो तोड़ना भी मुश्किल है। " मिथकीय सत्य तथा ऐतिहासिक सत्य में मूलभूत अन्तर होता है। पहले का संबंध श्रद्धा से है, जब कि दूसरे का संबंध विज्ञान से है। मिथकीय सत्य अनुष्ठानों से गुथा हुआ है, ऐतिहासिक सत्य का संबंध तथ्यों से होता है। "[15] एक ऐतिहासिक घटना केवल एक बार घटित होती है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। जैसे शिवाजी महाराज की ऐतिहासिक जानकारी में अन्य लेखक कोई परिवर्तन नहीं कर सकते। पर रामायण कई लेखकों ने विभिन्न भाषाओं में मूलकथा में परिवर्तन करके भी लिखी हे। जनश्रुतियों पर आधारित घटनाएँ उनके आधारपर मिथक कथाएँ रची जा सकती है। पर इतिहास पर घटित घटनाओं के आधारपर कोई कथा कल्पित नहीं की जा सकती।

आदिम मानव की बुद्धि अविकसित होने के कारण वह इतिहास नहीं तैय्यार कर सका। ऐतिहासिक घटनाएँ महत्वपूर्ण होकर भी उनमें भावनिक तथ्यों का अभावा पाया जाता है, इसलिये ये घटनाएँ जनसमाज में ज्यादा समयतक नहीं टिकी। ऐतिहासिक नायक अन्त में मिथकीय नायक ही बन जाते हैं। पर जब उन्हें जनसामान्य की मान्यता मिलती है तब।

मिथक की प्राचीन कथाओं में आदिम मानव के मनोवेग, कल्पना तथा विचारों की अभिव्यक्ति पायी जाती है। जब कि इतिहास में केवल सत्यता पायी जाती है। इतिहास की सही खोज ही मिथक के मूल में प्रवेश करना है। जब तक इतिहास की खोज पूरी नहीं हो जाती, तब तक मिथकीय तत्व या मिथकीय सत्य का कोई ठोस आधार बताना असंभव है।

मिथक मानवीय तत्वों का सार है तो इतिहास मानवीय जीवन का सार। मिथकीय घटनाओं का प्रभाव सामान्य जीवन पर दीर्घस्थायी रहता है, तो इतिहास का प्रभाव जीवनमूल्यों पर होता है। कुछ मिथक इतिहास से उत्पन्न होते हैं, तो इतिहास मिथक से उत्पन्न। इतिहास दोहराया नहीं जा सकता, जब कि मिथक कथाएँ दोहराई जा सकती है।

मिथक का संबंध जब जब समय से आया तब तब उसे इतिहास का ही सहारा लेना पड़ा। परंतु मिथकीय सत्य ऐतिहासिक सत्य से गहरे होते है जो कि जनसामान्य पर गहरा असर कर जाते हैं। जब इतिहास की दृष्टि से देखे तो मिथक भी दष्टिगोचर होते हैं तो जब मिथक की दृष्टी से देखे तो इतिहास नजर आता है। इतिहासकार को मिथक कथा भी उपयुक्त बन सकती है तो मिथकाभ्यासी को भी कभी कभी इतिहास का आधार लेना जरूरी बनता है।

इसप्रकार मिथक तथा इतिहास परस्पर पूरक होते हैं, उपयोगी सिद्ध होते हैं, कभी कभी एक दूसरे पर अवलंबित भी रहते हैं।

मिथक और दर्शन :

दर्शन का मूलाधार है, अध्यात्म और भारतीय संस्कृति का मूलाधार भी अध्यात्म ही है। धर्म तथा दर्शन एक सिक्के के दो पक्ष है। सिक्के की स्वीकृति का मतलब धर्म तथा दर्शन की स्वीकृति।

शंकराचार्य का द्वैताद्वैत वाद इसी दर्शन पर आधारित है। अद्वैतवाद याने आत्मा-परमात्मा एक ही है। इसे एकेश्वर वाद भी कहा जा सकता है। मानव की आत्मा और परमात्मा को अभिन्न माननेवाले अद्वैतवादी तो आत्मा और परमात्मा को भिन्न माननेवाले द्वैतावादी कहे जाते हैं।

" भारतीय मिथक साहित्य में दर्शन के विविध रूपों को अख्यानों के माध्यम से आरक्षित रखा गया। कहीं कहीं तो मिथक के माध्यम से दार्शनिक विचारों का क्लिष्ट रूप सर्वसुलभ हो पाया है। दार्शनिक परंपरा ने भारतीय समाज की चिंतनधारा पर आध्यात्मिक अंकुश लगाये रखने का कार्य किया है। "[16] भारतीय इतिहास परंपरा में योग-दर्शन, सांख्यदर्शन, न्यायदर्शन, बौद्धदर्शन, जैनदर्शन, वेदांत दर्शन आदि का वर्णन किया गया है। पुराण काल का जनमानस चिंतनशील था, इसका प्रमाण कथाओंद्वारा मिलता है, पर यह चिंतन बाह्य चिंतन के कई गुना ज्यादा आत्मचिंतन था। वह दार्शनिक विचारधारा; अस्तित्ववाद, नैतिकता तथा आध्यात्मवाद में केंद्रिभूत थी। द्वैताद्वेत वाद-आस्तिक-नास्तिक

वाद के बीच से गुजरकर मिथक अपने उद्दिष्ट के प्रति झुक गया। किसी अमूर्त सत्ता को या किसी अमूर्त शक्ति को मूर्तिकरण का रूपविधान मिथकद्वारा प्राप्त हुआ है। ईश्वर की परिकल्पना जनसामान्य के मन में मिथक की सहायता से ही भविभूत हो गयी है। मिथकों की पहचान हमारे देवालयों की मूर्तियाँ तथा धर्म के आधार पर हुई है।

भगवान बुद्ध को ही ले सकते हैं, वे तो इतिहास पुरूष है, पर उनके बौद्ध दर्शन से मिथकीयता टपकती है। उपनिषद, ब्राह्मण्यग्रंथ तथा पुराण में ऐसी कथाएँ है जो दार्शनिक तथ्यांकन कराती है। जैन दर्शन में सत्य तथा अहिंसापर बल दिया गया है। इन्होंने सृष्टि के छे तत्व माने हैं - जीव, शरीर, धर्म अधर्म, आकाश तथा मृत्यू। साधना के सात सोपान माने हैं - जीव, अजीव, अस्त्राव, बंधुसंवर, निर्जरा कैवल्य (मोक्ष)। आत्मा परिस्थिति नुसार अपनी विचार धारा बदल कर जीवन के भौतिक सुख को प्राप्त करने का प्रयास करती है। सत्कर्म और परमार्थ जैन दर्शन का उद्दिष्ट है। न्यायदर्शन में तर्कप्रणाली समाविष्ट है। वेदांतदर्शन के अनुसार ब्रह्म जगत की उत्पत्ति का कारण है। ज्ञान तत्व को महानता का विवेचन इसमें किया गया है। भारतीय मिथक साहित्य में दर्शक के विविध रूप-कथा, घटना, ऋचा, उपनिषद, छांदोग्य, अरण्यक तथा वेद आरक्षित है। कुछ कथाओं से दार्शनिक विचारों का क्लिष्ट रूप सरल अर्थ प्राप्त कर गया हे। इनमें भी मिथकीयता दृष्टीगोचर होती है।

मिथक और धर्मनिरपेक्षता :

निरपेक्षता का महत्व है कोई कामना विरहीत कार्य। धर्मनिरपेक्षता याने कोई कामना किये बगैर धर्म का पालन करना / धर्म का संबंध मिथक से सदियों से है। वैसे धर्म में दर्शन आता है और दर्शन में धर्म। धर्म पवित्र अर्थ में लिया जाता रहा है। पर मिथक केवल पवित्र अर्थ में नहीं लिया जाता। इसप्रकार धर्म और मिथक रेल की पटरी के समान समांतर तो चलते है, पर एक दूसरे में कभी एकरूप नहीं हो सकते।

मिथक में धर्म विद्यमान होना ही चाहिये ऐसा संकेत कही भी नहीं मिलता। पर धर्म में मिथक अवश्य विद्यमान रहता है। मिथक समाज में घटित वस्तु है तो धर्म देवताओं में घटित। मनुष्य का सामाजिक चिंतन मिथक में आ जाता है, पर धर्म में नहीं आता। पर धर्मनिरपेक्षता का मतलब विश्वासों को समझना है इसे खत्म करना नहीं। परंपरागत रूढ़ियाँ समाजद्वारा व्यक्ति के जीवन को क्रियान्वित करती है, व्यक्ति की मनचेतना उन बातों को स्वीकारना या न स्वीकारना अपने विचारों पर

निर्भर करती है।

धर्म की स्थापना पुराण काल से सर्व विदित है। धर्म प्राचीन काल से लेकर आज तक समाज में साहित्य में विद्यमान है। धर्म का महत्व भी कम नहीं हुआ है। मनुष्य सामाजिक प्राणीमात्र है। धर्म भी तो समाज में पनपता है। समाज की प्रचलित रूढियाँ तथा विश्वासों को व्यक्ति अपनाता है। मिथक व्यक्तियों की पहचान करता है तो धर्म देवताओं की। मिथकों में ऐतिहासिकता प्रचुर मात्रा में रहती हैं तो धर्म में कल्पना तथा लोकविश्वास। धार्मिक कथा उपदेशात्मक होते हुए भी उसमें आचार विचार के पालन का ब्यौरा मिलता है।

धार्मिक भावना धर्म का पालन करना सिखाती है। धर्म मनुष्य को ज्ञानमार्ग पर, सच्चे मार्गपर चलना सिखाता है।

जनता-प्रजा धर्म को धारण करती है। व्यक्ति को अज्ञान से दूर करना ही धर्म का कार्य है। धर्म की कोई सीमा नहीं होती। आज के जटिल जीवन में धर्म के लिये फुरसत तथा औकात नहीं है। फिर भी अपने अपने ताकद की अनुसार धर्म किया जा सकता है। भारतीय संस्कृति सर्वश्रेष्ठ संस्कृति मानी जाती है। भारतवासी भारतीय रूढ़ियाँ तथा परंपरा को आसानी से नहीं तोड़ सकता।

ईश्वर की परिकल्पना हमें मिथकों के माध्यम से प्राप्त हुई है। मिथक धार्मिक कथाओं से, घटनाओं से तथा भावनाओं से जुड़े रहते हैं। धर्म की परिधि में मिथक आवश्यक बात बन गयी है। जीवन से धर्म तथा मिथक दोनो जुड़े रहते हैं। धार्मिक प्रतिकों का निर्माण साहित्य इतिहास तथा भाषा द्वारा होता है। इसी प्रकार मिथक भी साहित्य में इतिहास में तथा भाषा द्वारा ही प्रतीयमान होते हैं।

" किसी अदृश्य दैविक सत्ता के प्रति विश्वास भावना को यदि धर्म की व्यापक परिभाषा स्वीकार कर ली जाय तो आदिम मानव द्वारा रचित ये मिथक धर्म के सहयोगी तत्व माने जा सकते हैं। अमूर्तिकरण द्वारा दैवीकरण मिथकों की मूलभूत विशेषता है। "[17]

मिथक कथा इतिहास के रूप में भी प्रसिद्ध रहती है तो धार्मिक कथा जनमानस के प्रतिबिंब के रूप में प्रसिद्ध रहती है। व्यक्ति को समाज की आवश्यकता होती है, समाज को धर्म तथा मिथक की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार ये धर्म समाज, मिथक घटनाएँ, कथाएँ सब परिक्रमा चलती रहेगी।

मिथक और प्रतीक विधान और बिम्ब विधान :

प्रतीकात्मकता के रूप में ही मिथक का उपयोग साहित्य क्षेत्र में हुआ है। वैसे तो मानव ही ज्ञान धर्म, भाषा, पुराण आदि का प्रतीक मात्र है। प्रतीक के मायने चिन्ह लक्षण निशाण आकृती रूप आदि से सिद्ध होते हैं। प्रतीक शब्द विभिन्न क्षेत्र में भी उपयुक्त है।

भारतीय संस्कृति का प्रतीक है - कमल। भारतीय राष्ट्र के रूप में तिरंगा झंडा प्रतीक है। विद्या का प्रतीक है वटवृक्ष। इस प्रकार हर प्रकार का कुछ न कुछ प्रतीक जरूर होता है।

पुराण कथाओं में हर घटना में कोई न कोई प्रतीक जरूर पाया जाता है। स्थान के प्रतीकों को देखते है - वन-वैराग्य का प्रतीक माना जाता है। नदी शांतता का प्रतीक। प्रतीकों को मिथक की आवश्यकता होती है और मिथकों को प्रतीकों की आवश्यकता। प्रतीकों से मिथकीयता की तथा मिथकों से प्रतीकों की मौलिकता समझी जा सकती है।

मानवीय चेतना की प्रक्रीया भी प्रतीकोंद्वारा ही होती है। हमने पिछे देखा की प्रतीक अनेकार्थवादी होते हैं। मिथकों को कथाओं में गढा जाता है। कलाकार को प्रतीकों की ज्यादा अवश्यकता पडती है। चेतन मन से कथा गढ़ ली जाती है। कविता को मिथक धर्मी कहना गलत नहीं होगा। " " प्रतीक धर्मी होना मिथक की नियति भी है। और उसकी पहचान भी। शायद वे सुखी है जो अस्तित्व के उहापोह से बेखबर परंपरागत मानव धर्म को निबाहते हुए उस आद्य ' पवित्र ' और ' महान ' से जुड़े रहते है। "[18]

उपयुक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि, आदि मानव धार्मिक था पर आज के मानव को ज्यादा अस्तित्व होना या धार्मिक होना असंभवसा बन जाता है। मानव का अस्तित्व भी परमेश्वर का प्रतीक माना जा सकता है। प्रतीक के अर्थ की खोज करना भी सत्य की खोज के बराबर है।

बिंब कथाओं में या घटनाओं में ज्यादातर अप्रस्तुत रूप में ही रहते हैं। बिंब को मानसिक प्रक्रिया का प्रतिफलन कहना अधिक उचित होगा। मिथकीय बिंब तो अप्रस्तुत रूप में ही मिलते हैं। बिंब का संबंध मन से होता है यह मन अवचेतन मन है। अवचेतन मन से ही तो कला प्रस्तुत होती है। बिंब और प्रतीक में मूर्त-अमूर्त नाता भरे रहता है। फिर भी प्रतीक और बिंब बहुत ही निकटवर्ती शब्द है। हमने ऊपर बिंब को मानसिक प्रक्रिया कहा है। पर एक जटिल प्रक्रिया है। अमूर्त को मूर्त स्वरूप देना पूर्णतया कलाकार के हाथ में होता है। " मिथकीय बिंब में बिंब के सभी सामान्य गुणधर्म होते

या हो सकते हैं - इस अतिरिक्त वैशिष्ठय के साथ ही उनका आगम सामूहिक अवचेतन के माध्यम से होता है और वे मानवीय तथा सांस्कृतिक विरासत के रूप में होते हैं। "[19]

अवचेतन मन का उद्‌घाटन व्यक्तिगत से ज्यादा सामूहिक में होना जन समाज को लाभप्रद होता है। मानवी मन पर संस्कृति की छाप रहती है, इसीके आधार पर बिंब को रूपविधान में ढ़ालकर कलाकार अपने कला का सृजन तथा विस्तार करता है।

आदि-मानव की बुद्धि अविकसित होने की वजह से तथा उस समय लेखन सामग्री की अनुपलब्धि के कारण पुराणों के बिंब चिंताकन में मिलते हैं। भारत के पुराने मंदिर जैसे अजंता-वेरूल की कलाकारी से हमें पुराने बिंबों की तथा पुराने कलाकारों के अवचेतन मन का रूपविधान प्राप्त होता है। आदिमानव के बिंब शक्तिशाली एवं अर्थपूर्ण होते थे।

हमने देखा है कि मिथकों का पुननिर्माण हो सकता है। उसी प्रकार बिंबों का पुननिर्माण होता है। बिंबों की रचना जटिल समस्या होते हुए भी विचारों और भावों के आधारपर इसका निर्माण होता रहता है। बिंब कलाकार की मानसिक भाषारूप होते हैं। बिंब से केवल काव्य या कला की निर्मिती नहीं होती तो उसमें रसनिर्मिती या देखने या पढ़नेवाले का साधारणीकरण भी आवश्यक रहता है यह कार्य उच्च कोटि का कलाकर ही कर सकता है।

प्रतीक और बिंब में संकेतात्मकता छिपी रहती है। ये कला की व्यंजना करते हैं। मिथक में प्रतीक तथा बिंब दोनों की आवश्यकता रहती है। क्योंकि हमने उपर देखा है कि प्रतीक मिथक तथा बिंब सभी का संबंध मानव के अवचेतन मन से होता है। इस प्रकार मिथक प्रतीक तथा बिंब परस्परालंबी तथा परस्पर उपयुक्त भी होते हैं।

बिंब आकस्मित होने के कारण मानस पटल पर गहरा असर करते हैं। कभी-कभी बिंब तात्कालिक भी होते हैं। पर प्रतीक दीर्घजीवी होते हैं।

मिथक और रूपक कथा :

प्रतीक और रूपक में अर्थगत और वस्तुगत अंतर है - प्रतीक भक्तिगत, वस्तुगत, कथागत या घटनागत होते हैं तो रूपक अर्थगत होते हैं। जैसे भारत का ' तिरंगा झंडा ' प्रतीकात्मक है तो ' ' गदहा ' शब्द मूर्ख के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

नाटक रूपक का एक भेद माना है। भारतीय नाट्याचार्यों ने अभिनेय नृत्य को रूपक

कहा है। अंकों की गणना रस का प्राधान्य नायक की विशेषता तथा प्रवृत्तियों का प्रयोग आदि के आधार पर रूपक के दस भेद माने गये हैं।

1) नाटक	2) प्रकरण
3) भाण	4) व्यायोम
5) समावकार	6) डिम्
7) इग्रहामृण	8) अंक
9) विथि	10) प्रहसन

इनसभी प्रकारों में मिथक पाये जाते हैं। रूपक कथा में मिथकीय उपादेयता तथा महत्ता का समावेश रहता है। सामाजिक रूपक में कल्पना की अपेक्षा अर्थक्ता पर ज्यादा जोर दिया जाता है। रूपकों में संकेत प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। जैसे -

गुद्धा - मूर्ख	पंजाब का सिंह - रणजीत सिंह
चाँद - सुंदरता	रात - दुःख या उदासीनता
सवेरा - आनंददायक घटना	साँप - क्रूरता

प्रत्येक रूप कथा में मिथकों को पाना कठिन है पर पुराने मिथक कथाओं में रूपकात्मकता जरूर पायी जाती है। मिथकीय संवेदना रूपकोंद्वारा प्रकट होती है। कुछ काव्य शास्त्रियों ने रूपक को अलंकार के रूप में चित्रित किया है। परंतु यथार्थ रूपक तथा मिथकीय इतिहास का ही अंग है। हर समय की रूपक कथा तथा हर समाज की रूपक कथा अपना मिथकीय महत्व प्रस्थापित करती है। हर साहित्यिक तथा ऐतिहासिक रूपक कथा का रास्ता मिथकों से गुजरकर ही जाता है।

शंभूनाथजी का कथन है - " रूपक कथा सिर्फ घटनात्मक के दूसरे स्तर को व्यक्त नहीं करती वह सुक्ष्म मानवीय दशाओं के भी वास्तविक स्तर को उभारती है। कलात्मक रूपक कथाए सामाजिक इतिहास और मानवीय संवेदना का वहन करनेवाली होती है। अतः शब्दरूपक को अलंकार की कोटी में भले ही रखा जाय यथार्थ रूपक कथा को मिथक इतिहास का अंग मानना चाहिये। रूपक कथा के प्रयोग को भाषा की गरीबी का प्रमाण माना जाता है। भाषा की अर्थशक्ति अथवा किसी तात्पर्य के लिये जब शब्द नहीं मिलते तब रूपक का प्रयोग होता है। "[20] इससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी साहित्य में रूपक या रूपक कथा के अनुसंधान की नितांत आवश्यकता है। कभी कभी अधूरे या

अल्प ज्ञानपर किसी निष्कर्ष पर पहुंचना गलत साबित होता है। रूपक मनोगत प्रस्तुत करने में समर्थ न हो पायें तो उसकी अर्थवत्ता खो जाती है।

मिथक तथा लोककथा परस्पर पूरक रहती है, क्यों कि मिथक को लोकविश्वास प्राप्त होनेपर ही वह साहित्यिक बन जाता है। लोककथा लोकविश्वास के आधारपर ही कही जाती है। धार्मिकता खो जाने के कारण ये कथाएँ लोककथाएँ कही जाने लगी। लोककथाओं का स्वतंत्र अस्तित्व होनेपर भी उनमें मिथकीयता विद्यमान रहती है, चाहे वह पुराण काल की लोककथा हो या आधुनिक काल की लोककथा।

मिथक तथा परिकथाओं का रूपगत समीकरण हो सकता है। मिथक कथा प्रकृति में उत्पन्न होने के कारण परीकथा से मिलती जुलती है। परीकथओं में पशु-पक्षी आदि की कल्पना की जाती है, मिथक में भी कल्पना का प्रयोग रहता है। इसप्रकार मिथक तथा परीकथाओं में रूपगत समानता पायी जाती है।

मिथक और भाषा :

समाज में भाषा का उपयोग प्रत्येक व्यक्ति करती है। व्यक्ति-व्यक्ति के साथ बोलती है, विचार-विमर्श करती है इसका माध्यम भाषा ही तो होता है। मनुष्य के अस्तित्व का अनुभव ही भाषा का उपयोग है। वाणीद्वारा ही भाषा का उपयोग किया जाता है। " भाषा को सृजनात्मक ताकत के रूप में मिथक का इस्तेमाल होता है, तो मिथक सामाजिक यथार्थ का विरोधी न होकर एक भाषिक रूप हो जाता है। मानवीय व्यवहार में जीवित रहता है, और अन्ततः एक साहित्यिक रूप में सुरक्षित हो जाता है। "[21] भाषा पूरे जगत की सम्पत्ति है। केवल भारत में ही कितनी भाषाएँ चलती है - हिन्दी (राष्ट्रभाषा के रूप में), मराठी, गुजराथी, बंगाली, उडिया, तामिल, तेलगु, कन्नड, पंजाबी आदि कई। भाषा को सीमित परिवेश में नहीं रखा जा सकता। भाषा विचार तथा भावनाओं का वहन करती है। 'भाषा का सामाजिक महत्व भी नगण्य है।

भाषा तथा मिथक का संबंध भी अटूट है। भाषा सामाजिक है, कथाएँ भी सामाजिक है तो दोनों में मिथकीयता का अंतर्भाव होना भी स्वाभाविक है। मिथक को भाषिक संरचना कहा जा सकता है। भाषा सर्वशक्तिमान है। पिछडा हुआ समाज भी भाषा का उपयोग बराबर करता आ रहा है। भाषाद्वारा भावनाएँ तथा संवेदनाएँ अभिव्यक्त की जा सकती है। घटनाओं का उद्घाटन मिथक द्वारा भाषा

के जरिये समाज तक पहुँचता है। भाषा जीवन का अर्थ बताकर समाज की जरूरते पूरे करने का सशक्त माध्यम है। भाषा अपनी सृजनशक्ति के आधारपर रूपक, प्रतीक, बिंब, काव्य तथा साहित्य का निर्माण करती है। भाषा में बुद्धिवाद, तार्किकता, वस्तुवाद सभी विद्यमान रहते हैं। सौंदर्यबोध का सृजन भी भाषिक संरचना से होता है। बर्जुआ लोगों के विचार भाषाद्वारा पिढ़ी, दर-पिढ़ी चलते रहते है। भाषा अमर्याद तथा असीमित है।

जब कलाकार कला का सृजन करता है तो पहले वह कल्पना उसके मस्तिष्क में उभरती है। वही कल्पना भावनाओं द्वारा भाषा के माध्यम से साहित्यरूप बन जाते हैं। इसप्रकार भाषा की परिक्रमा मस्तिष्क से लेकर साहित्य तक चलती रहती है। भाषा शक्ति के सही उपयोग से साहित्य होता है। यही साहित्य उस देश को आदर्श प्रस्थापित करता है। इस प्रकार भाषा का महत्व जनमानस से साहित्यतक है।

विद्वानों ने भाषा विज्ञान द्वारा भाषा का उद्‌भव तथा विकास का अनुसंधान किया है। इसमें स्वर, स्वराघात, बलाघात, व्याकरण आदि बातों पर विचार किया है। पाणिनी का व्याकरण साहित्य में उप्युक्त तथा प्रसिद्ध है। पाश्चात्य विद्वान एडवर्ड सैपिर ने भाषा को सामाजिक यथार्थ का गाईड कहकर पाणिनी की प्रशंसा की है। भाषाभ्यासियों को इस व्याकरण का बहुत उपयोग हुआ है। भाषा का स्वरूप व्यक्तिगत, समाजगत, प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय भी होता है।

व्यक्तिगत में व्यक्ति-व्यक्ति के बीच में जो संभाषण चलता है - वह भाषा। समाज में चार-पाच व्यक्ति या समूह आपस में विचार-विमर्श करते है वह भाषा। प्रदेश में की जानेवाली भाषा प्रादेशिक तो पूरे राष्ट्र में बोली जानेवाली भाषा राष्ट्रीय होती है।

प्रत्येक देश में भाषा का वैविध्य होने के कारण एक राष्ट्रभाषा होना जरूरी है। इंग्लैड की अंग्रेजी राष्ट्रभाषा तो चीन की चीनी, भारत की हिन्दी आदि कई। अगर भाषा का अस्तित्व नहीं होता तो व्यक्ति-व्यक्ति की बोलचाल नहीं हो सकती। भाषा बोलचाल की अलग रहती है तो साहित्य की अलग। साधारणतः लिखित रूप में पायी जानेवाली भाषा व्याकरण से परिपूर्ण रहती है।

मिथक और साहित्य का परस्पर संबंध :

साहित्य शब्द का अर्थ असीमित, अमोघ, विस्तृत तथा अपरिमित है। साहित्य में धर्म, लौकिकता, काव्य, राज्यव्यवस्था, नाटक, निबंध, उपन्यास, अर्थव्यवस्था, समाजव्यवस्था आदि कई बातों का समावेश रहता है। साहित्यद्वारा लिखित सामग्री मिलती है। साहित्य तथा मिथक का संबंध नजदीकी है।

साहित्य अनेक रूपों में पाया जाता है, पर मिथक कुछ मर्यादा में ही पाये जाते हैं। साहित्य का उद्देश्य सौंदर्यसृष्टि है तो मिथक का उद्देश्य लोकविश्वास की अभिव्यक्ति। मिथक आदिमानव से विद्यमान है, क्योंकि आदि मानव विश्वास तथा भावनाओं पर ज्यादा अवलंबित था। साहित्य दार्शनिक तथा वैज्ञानिक होने के कारण अचेतन मन से ज्यादा संबंधित नहीं रहते। इसप्रकार साहित्य तथा मिथक में एक अस्पष्ट रेखा सी खींच गयी है। मिथक का मानवीय वृत्तियों से संबंध रहता है तो साहित्य इसे अभिव्यक्त करने का साधन।

" भारतीय मिथक साहित्य वह फलक है, जिसपर आद्यबिंबो, कलात्मक चित्रों, सामाजिक विषमताओं के दार्शनिक विचारों आदि से सम्बद्ध अद्वितीय रूप अंकित है। "[22]

वास्तव में मिथकों के माध्यम से मनुष्य ने साहित्य की अनुभूति की और साहित्य को संस्कारित किया। चंद्र, सूर्य, निशा, पृथ्वी, आकाश, तारे, सागर, बिजली, जन्म, मृत्यू आदिशब्द साहित्य में भौतिकता नहीं मिथकीयता दर्शाते हैं। मिथकों में प्रकृति देववाद प्रेरणा रूप में मिलते हैं।

प्रत्येक देश में उसके इतिहास, धर्म तथा समाज व्यवस्था आदि के साहित्य में मिथक आदर्शपूर्ण नहीं है परंतु भारत के पुराणकाल या आदिकाल के मिथक आदर्शपूर्ण एवं उपयुक्त है। भारतीय प्राचीन साहित्य प्रगल्भ था उसका पता शिलालेखो, स्तूपों, स्तंभो, ताम्रपट आदि के लिखित सामग्री से चलता है। वेद, रामायण, महाभारत, गीता आदि सब को राष्ट्रीय काव्य या राष्ट्रीय साहित्य कहा जा सकता है। भारतीय साहित्य विविध विषयों से विभूषित है और उसमें धार्मिकता प्रचुर मात्रा में मिलती है। आदि जन समाज भावनात्मक बंधनों से युक्त रहने के कारण वे धार्मिक बने, जन मानस के विश्वास के आधारपर ही तो धार्मिक कथाएँ प्रचलित हुई। साहित्यिक मिथक समाज के यथार्थ का प्रतिबिंब मात्र है। मानवीय कल्पना का सौंदर्य-विचारों का सौंदर्य ही मिथकों की अभिव्यक्ति है।

मिथक तथा साहित्य में चिरंतन तथा सामयिक सत्य का समावेश रहता है। मिथक और साहित्य भी अवचेतन मन की इच्छापूर्ति के साधनमात्र है। प्रकृति का अनुकरण कलाद्वारा कलाकार करता है। साक्षात्कार तथा प्रत्यक्षानुभूति पर मिथकों की निर्मिति होती है। कलाकार इसे साहित्य का अंग बनाता है। " साहित्य में मिथक का प्रयोग आरंभ से ही होता रहा है। वरन् कहना यह चाहिये कि साहित्य का आरंभ मिथक से हुआ है या साहित्य मूलतः मिथक रूपही था। भारतीय साहित्य का आदिरूप वैदिक मिथकों में प्राप्त होता है। "[23] साहित्य तथा मिथक का संबंध आदिकाल से लेकर

आजतक बराबर बना रहा है। साहित्य तथा मिथक का संबंध प्रबंध काव्य द्वारा नाटक प्रणीत मुक्तक आदि द्वारा स्पष्ट होता है। साहित्य की विविध विधाओं से मिथक का नजदिकी संबंध काव्य में रहता है। गद्य में कथानक के रूप में मिथक पाया जाता है तो पद्य में कविता के रूप में। काव्य में कल्पनाशक्ति प्रचुर मात्रा में रहने से मिथकों को भी यहा मुक्त रूप में पाया जाता है।

मिथक के कुछ पात्र तत्कालिक होते हुए भी सांस्कृतिक सामाजिक जीवन के परिणाम स्वरूप साहित्य में चिरंजीवी बन जाते हैं। यही पात्र आज के जन-जीवन में भी पाये जाते हैं। जैसे - मंथरा - बाली शबरी आदि। इन में आधुनिक युगबोध की झाँकी मिलती है।

महाभारत का कर्ण जैसा पात्र आज के जन-जीवन मिलना मुश्किल है। नमक-हलाली कम ही पायी जाती है आज के युग में। जिसका जूता उसीका सर इस न्याय से आज का समाज - आधुनिकता की ओर बढ़ रहा है यह बड़े दु:ख की बात है।

हमने ऊपर देखा है कि साहित्य के रूप किस प्रकार है। साहित्य के विभिन्न रूपों में उपन्यास-कहानी, निबंध, नाटक, एकांकी, आदि कई रूप मिलते हैं।

साहित्यकार अपनी भावयत्री और कारयत्री प्रतिभा के द्वारा साहित्य का सृजन करता है, जो विविध रूपों में अभिव्यक्त होता है।

नाटक का अन्य साहित्यिक विधाओं से पार्थक्य एवं महत्व :

भारतीय हिन्दी साहित्य का इतिहास देखकर ऐसा मालूम होता है कि यह बहुत ही विशाल है। कुछ विद्वानों ने हिन्दी साहित्य का अध्ययन सुकर करने के लिये हिन्दी साहित्य को कई विभागों में बाँटा है।

विदेशी विद्वान जॉर्ज ग्रिर्यसन ने हिन्दी साहित्य का गहरा अध्ययन करके उपलब्ध सामग्री को कालक्रमानुसार रखा। चारण काव्य, धार्मिक काव्य तथा दरबारी काव्य। इस परंपरा को मित्र बंधुओं ने आगे बढ़कर अच्छा योगदान दिया उन्होने साहित्य के विविध अंगोपर प्रकाश डाला। बाद में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा रामकुमार वर्माजी ने भी इसी प्रकार का उपयुक्त ग्रंथ लिखा। उन्होंने हिन्दी साहित्य को चार काल में विभाजीत किया। विरगाथा काल, भाक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिक काल। बाद में हजारी प्रसाद द्विवेदी, वीरेंद्र वर्मा, डॉ. नगेंद्र आदि विद्वानों ने भी हिन्दी साहित्य पर प्रकाश डाला।

हिन्दी की साहित्यिक विधाओं का अध्ययन आधुनिक काल से ही आरंभ हुआ। हिन्दी साहित्य की विधाए उपन्यास कहानी, नाटक, अलोचना संस्मरणा, रेखाचित्र, निबंध जीवनी, रिपोर्ताज आत्मकथा इत्यादी।

हिन्दी उपन्यास साहित्य का विकास अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हुआ है। उनका उद्‌भव 19 वी शती में माना है। उपन्यास परंपरा में मुश्नी प्रेमचंद जैनेंद्र कुमार आदि का नाम महत्वपूर्ण है। उपन्यास का विभाजन पूर्व प्रेमचंद युग, प्रेमचंद युग तथा प्रेमचंदोत्तर युग इस प्रकार हैं। इस काल में सामाजिक, पौराणिक, ऐतिहासिक प्रेम प्रधान, समस्या प्रधान, राजनीतिज्ञ आदि प्रकार के उपन्यास लिखे गये।

हिन्दी कहानियाँ मध्ययुग में ही ज्यादातर लिखी गयी। प्रसाद, प्रेमचंद, बेचन शर्मा, उग्र, जैनेंद्रकुमार, कौशिक, सुदर्शन आदि कहानीकारों ने कहानियाँ लिखी। जैनेंद्रकुमार की अधिक तर कहानियाँ मनोविश्लेषणात्मक रूप में लिखी गयी है। उनके कहानियोंपर फ्रायड़ का प्रभाव मालूम पड़ता है।

राष्ट्रीय जागरण का उष:काल भारतेंदु काल में हुआ था। उन्होंने निबंध का प्रारंभ इस काल से किया। भारतेंदु, द्विवेदी शुक्ल, बाबू गुलाबराय, हजारी प्रसादजी आदि का नाम निबंध क्षेत्र में विशेष उल्लेखनीय है।

हिन्दी नाटक का उद्‌भव 13 वी सदी माना गया है। परंतु नाटकों का वास्तविक आरंभ भारतेंदु काल से माना जाना चाहिये। उनके काल से लेकर अधिकतर नाटक लिखे गये। तब पौराणिक नाटक लिखे गये। बाद में बहुत सारे नाटककारों ने नाटक लिखे। पर उसको खेलने का अभाव था क्योंकि रंगमंच की समस्या। उच्चकोटि के नाटकों का निर्माण होकर भी उनके प्रदर्शन में कठिनाई उत्पन्न हुई। स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद रंगमंच का हाल सुधर गया। और नाटक खेले जाने लगे। तबतक कई नये नाटककारों ने अपनी प्रतिभा साहित्य में पिरोई थी। ये नाटक ऐतिहासिक, पौराणिक, आधारपर नये मोड ले रहे थे। " वस्तुतः नाट्य-साहित्य के उत्कर्ष काल के रचित इन ऐतिहासिक एवं पौराणिक नाटकों की रचना एक समसामायिक परिस्थिति को उसकी अपनी नाटकीयता में अभिव्यक्त करने के लिये हुई हे, इसलिये उन्हे इतिहासगत सन्दर्भों से अलग रखकर ही उनके साथ न्याय किया जा सकता है। "[24]

इसप्रकार साहित्य की विधाओं में से नाटक को नया मोड, नये विषय प्राप्त हो गये और

इतने में कुछ नाटककारों के मन मे मिथकीयता का प्रभाव पडने लगा। उन्होंने नाटक में नये मोड़पर मिथक नाटक लिखकर दूध में शक्कर का योग किया।

उपन्यास कहानी तो केवल पढ़ने या सुनने के लिये होते हैं। परंतु नाटक दृश्यकाव्य या दृश्यविधान है। नाटक में भावों का प्रदर्शन किया जाता है - जैसे - मानसिक क्रियाव्यापार, क्रोध, अस्वस्थता, प्यार, शरम, डर, द्वेष आदि। नाटक का पार्थक्य है अभिनेयता, तथा महत्व है भावों का प्रदर्शन।

अभिनय प्रस्तुति के समय दर्शक को पूरे खायाल से नाटक देखना पड़ता है, नायक या पात्रों के अभिभावों से उनके मंतव्य को पहचानना ही दर्शक की बुद्धि की परख है। अभिनयद्वारा प्रस्तुत सारी बाते नाटक में लिखित रूप में मिल सकती है, पर नाटक देखने का मजा ही कुछ और है।

नाटक में अभिनेयता के साथ रसनिर्मिती का भी महान पूर्ण तत्व सन्निहित रहता है। इन्हीं दो तत्वों के आधारपर नाटक अन्य विधाओं से पृथक है तथा महत्वपूर्ण भी। नाटक में कायिका, वाचिक, अभिनय प्रस्तुत किये जाते हैं। भावप्रदर्शन के समय बातचीत या संवाद की आवश्यकता नहीं होती। बुद्धिजीवियों के लिये नाटक बहुत ही प्रिय विधा मानी जाती है। कुछ समय बाद नाटक अपने बंधनों से बाहर निकलकर स्वतंत्र हो गया। नाटक के तत्व सर्वमान्य थे। इनके नायक ऐतिहासिक या पौराणिक होने चाहिये। देशकाल भी, सीमित होने चाहिये। घटना भी प्रसिद्ध होनी चाहिये आदि कई।

रंगमंचपर जैसे जैसे सुविधाएँ आती गयीं नाटक विधा सम्पन्न तथा प्रगल्भ होती गयी। वेशभूषा, केशभूषा, दृश्यबंध, पर्दे, माईक, आवाज की सुविधा आदि में सुधार आ गया। रंगमंच पर संगीत के जरिये भी ऐसी कई बातों का उद्घाटन किया जा सकता है, जो लिखने पर भी नहीं पता चलेगा। संगीत के जरिये प्रणयाराधना, आलाप, भय, भयानकता, अस्वास्थ ऐसी कई बाते प्रदर्शित की जाने लगी।

नाटक के लिये निर्देशक की आवश्यकता होती है। निर्देशक अनुभवी तथा बुद्धिमान होगा तो नाटक का प्रदर्शन उत्तम होगा। रंगसंकेत, पर्दा उठाना, गिराना, संगीत, तथा दृश्यबदल इन सब का सामंजस्य होना बहुत ही आवश्यक होता है। अच्छे निर्देशक नाटक को सफल बनाने के लिये महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। निर्देशक को नाटक की कथावस्तु, नायक तथा देशकाल आदि के आधारपर वेशभूषा, केशभूषा आदि का संयोजन करना पडता है। निर्देशक को नाटककार तथा दर्शक दोनों का समन्वय कराके रसनिर्मिती करनी पड़ती है। दर्शकों के रूचि का खयाल तथा नाटककार के भावना का

खयाल रखकर निर्देशक नाटक को प्रस्तुत करता है।

इन्ही सभी के आधारपर नाटक साहित्य की अन्य विधाओं से पृथक एवं उच्चस्तर पर स्थित है।

नाटक में मिथक का प्रयोग :

भारतीय पुरा-साहित्य में मिथक का प्रयोग पाया जाता है। पुरा-साहित्य बहुधा काव्य रूप में पाया जाता है। काव्यरूप में या कविता में मिथक का प्रयोग पाया जाता है। पर इधर कुछ सालों से या यों कहिये स्वतंत्रता के बाद गद्य साहित्य में भी मिथक का प्रयोग पाया जाता है, वह भी ज्यादातर नाटक विधा में पाया जाता है।

नाटक और मिथक का संबंध मूलरूप में है। पुराणकाल से लेकर आजतक नाटक की निर्मिती बराबर होती रही है।, पुराकाल में कालिदास ने ' अभिज्ञान शाकुन्तलम् ', ' कुमार संभव ', विक्रमोवर्शीय आदि। भवभूति ने मालती-माधव, उत्तर रामचरित आदि। ऋषियों के आश्रम के चमत्कार, आशिर्वाद, शाप ये सब बाते मिथकीय तत्वों से परिपूर्ण है। आहुति, बलि चढाना, यज्ञ, देवताओं का प्रकटन आदि बाते मिथक से संबंधित है।

भारतेंदु काल में पुराण का संध्याकाल तथा आधुनिक काल का उष:काल हो रहा था। भारतेंदु खुद पुराने युग के होकर नवीन युग का सृजन समर्थ रूप में प्रस्तुत कर रहे थे। द्विवेदी काल का साहित्य थोड़ा इतिवृत्तात्मक, पौराणिक तथा नवीनता का समन्वय ऐसी स्थिती में पाया जाता है। " हिन्दी साहित्य में चिरकाल से मिथक कथाओं का प्रयोग हुआ है। मिथकीय घटना और पात्र समाज के हर परिवेश के अनुरूप ढ़लते गये। आधुनिक हिन्दी साहित्यपर पहुंचते पहुंचते वे बहुआयामी प्रयोगों का माध्यम बन गये। हिन्दी साहित्य में मिथकीय प्रासंगिकता दर्शनीय है। "[25] आधुनिक काल तकरीबन स्वतंत्रता के बाद का ही माना जाता है। इस काल में कुछ नाटककारों के नाम उल्लेखनीय है। जैसे - जगदीशचंद्र माथुर, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, सुरेंद्र वर्मा, भीष्म साहनी, शंकर शेष, दुष्यन्त कुमार तथा लक्ष्मीनारायण लाल। वास्तव में नाटक में मिथक का प्रयोग मानव जीवन के यथार्थ से अधिक संबंधित रहता है। यद्यपि मिथक को पुराकथा, पुराख्यान, पुरावृत्त आदि शब्दों से अभिहित किया जाता है। मिथक मानव के आदिम विश्वास के द्योतक है। अत: डॉ. सुब्रत लोहिडों का कथन यह है कि, - ' मिथकों का नाटक में प्रयोग यथार्थ को भावुक बनाने के लिये नहीं होता बल्कि इसे

गहरे विश्वास से जोडने के लिए होता है। ... आधुनिक नाटककारोने मिथकों को अपने कथ्य के सार्वभौम ढाचे के रूप में स्वीकारा है ..... आधुनिक नाटकों के लिए मिथकीय ढ़ाँचे अधिक उपयोगी हो सकते है और इनके माध्यम से यथार्थ की अभिव्यक्ति हो सकती है।' [26] इसमें संदेह नही कि, आधुनिक हिंदी नाटककारोंने मिथकों का प्रयोग मुख्यत: यथार्थ को चित्रित करने के लिए ही किया है।

जगदीशचंद्र माथुर के मिथकीय प्रयोग के नाटक है कोणार्क, पहला राजा, शारदीया, कुंवरसिंह की ठेक, तथा दशरथनंदन। कोणार्क में ऐतिहासिक मिथक की झलक मिलती है। इसमें गणतांत्रिक चेतना निहित है। कोणार्क में ऐतिहासिकता की अपेक्षा कल्पना और अनुभूति प्रधान मात्रा में पायी जाती है।

इसी नाटक की भूमिका में नाटककार लिखते है, "इतिहास का सहारा मैंने अल्प मात्रा में ही लिया है, फिर भी इस नाटक को पूर्णतया अनैतिहासिक नहीं कहा जा सकता। इतिहास-पुराण का उपयोग नाटककार की वैयक्तिक अभिरूचि के अनुसार भी हुआ है। जिनमें उपलब्ध ऐतिहासिक तत्वों के बावजूद कल्पना और अनुभूति की ही प्रधानता है, इसलिए यहाँ इतिहास तत्व गौण और महत्वहीन हो गया है।"[27] 'पहला राजा' में भी मिथकितिहास द्वारा आधुनिकता की अभिव्यक्ति पायी जाती है। उन्होंने अपने नाटकों में इतिहास तथा पुराण को समसामायिकता प्रदान की है।

धर्मवीर भारती को अंधायुग, बहुचर्चित रचना मानी जाती है। महाभारत का उत्तरार्ध है यह नाटक। अंधायुग की मिथकीयता सामान्य जनमानस की पीड़ा है। इस नाटकों के पात्रों में से मिथकीयता टपकती है। संस्कृति, परंपरा, रूढिप्रिय भारत वासियों के आस्था को धर्मवीर भारती में तोडा मरोडा है। कुछ विद्वानोंने इसे मिथक के रचनाधर्म के प्रतिकुल मानकर मान्यता नहीं दी।

मोहन राकेश के 'आषाढ का एक दिन' तथा 'लहरों के राजहंस' में मिथकीयता को मान्यता मिल गयी है। ये दोनो नाटक कालिदास तथा बुध्द जैसे महान आसामी के जीवनपर आधारित है। दोनो महान व्यक्तियों के अंतर्द्वद्व का रहस्योंद्घाटन नाटककार ने सफलतापूर्वक किया है। इन नाटकोंमें ऐतिहासिकता के साथ साथ मिथकीयता भी नजर आती है। इन नाटकों का प्रमुख उद्देश्य है नायक के अंतर्द्वद्व को उद्घाटित करना जो नाटककारने बड़ी कुशलतापूर्वक उद्घाटित किया है।

सुरेंद्र वर्मा के नाटक है 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक', सेतुबंध, द्रौपदी, आठवा स्वर्ग, तथा छोठे सैयद बड़े सैयद। इनमें द्रौपदी सबसे ज्यादा चर्चित रहा। उन्होंने इसमें

पुराने मिथक को नया संदर्भ दिया है। मिथक की रूपाकृति नारी विडंबना का सूत्र बताती है। उन्होंने कुछ नाटकोंद्वारा मनोवैज्ञानिकता भी उजागर की है। उन्होंने मिथकीय कल्पना इतिहास तथा पुराण के आधार पर सामयिक परिवेश, जीवन संदर्भ देने का प्रयास किया है, पर पूरे पूरे कामयाब नहीं हो पाये। उनकी मूल संवेदना ज्यों कि त्यों रह गयी, उन्हे अपने उद्देश्यपूर्ती के समय सामर्थ्यहीन बना गयी।

भीषम सहानी के नाटक है - हानूश, कबीरा खड़ा बाजार में तथा माधवी।

"'हानूश' ऐतिहासिक नहीं, लगभग काल्पनिक है फिर भी इसकी रचना में नाटककार झेकोस्लोवाकिया में प्रचलित किंवदन्ति से आंदोलित हुआ। 'कबीरा खड़ा बजार में' का कबीरदास मध्यकालिन भारतीय इतिहास का विद्रोही व्यक्तित्व है, जिसने लोक चेतना में मिथकीय शक्ति हासिल कर ली है, और 'माधवी' में नारी निर्यात का क्रूर प्रसंग महाभारत से लिया गया है।"[28]

शंकर शेष के नाटकों में से एक और द्रोणाचार्य तथा कोमल गांधार विशेष महत्वपूर्ण है। 'एक और द्रोणाचार्य की मिथकीय परिकल्पना तात्कालिक और सीमित परिवेश के यथार्थ से जुड़ी है। उसमें मिथक का वह सृजनात्मक उपयोग लक्षित नहीं होता जो कृति की व्यापक परिप्रेक्ष्य और सार्वकालिक सत्य के वाहक रूप में स्थापित कर सके।'[29] 'कोमल गांधार का मिथकीय परिवेश महाभारतकालीन कम, मानवीय यथार्थ के अधिक नजदीक है।'[30]

दुष्यंत कुमार का 'एक कंठ विषपायी' युगीन सत्य का रहस्योद्घाटन करता है। तथा सामाजिक चेतना को भी प्रकट करता है। पुरान कथा का शंकर विष पीकर संतुष्ट होता है, पर आज का शंकर बुभुक्षित है। यह आधुनिक स्थिति के बोध को अवगत करानेवाली कथा है। पुरानकाल तथा आधुनिकता का संयोजन किया है नाटककारने। शंकर एक मिथकीय चरित्र है जो मानवीय दुर्बलताओं का बिंब उभारता है।

लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक सभी नाटककारोंमें ज्यादा संख्यामें तथा महत्वपूर्ण है। उनके मिथक नाटक है - सूर्यमुख, कलंकी, मिस्टर अभिमन्यू, नरसिंहकथा, एक सत्य हरिश्चंद्र, यक्ष्यप्रश्न तथा उत्तरयुध्द। इनमें से सूर्यमुख, यक्षप्रश्न तथा उत्तरयुध्द पुराण के आधार पर लिखे गये आधुनिकता की खोज के नाटक है। तो मिस्टर अभिमन्यु तथा एक सत्य हरिश्चंद्र केवल नाममात्र पुरान के है परंतु उनकी कथावस्तु नये परिवेश की है, समस्या जनसामान्य की है। पात्र मिथकीय तो घटनाक्रम मिथकीय इस प्रकार इनके नाटक महत्वपूर्ण माने गये है।

आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक नाटकों की मिथक यात्रा चलती आयी है। आधुनिक काल में समाज का यथार्थ चित्रण साहित्यकार अपने साहित्य में उभरता है। जीवनमूल्यों की किमत घट कर व्यक्ति का महत्व भी कम होने लगा था। आधुनिक जीवन में कुण्ठा, अनास्था तथा अतिवैयक्तिकता का प्रमाण बढ़ता गया। इन सबको मिटाने के लिए साहित्यकारों का योगदान आवश्यक था। मिथक तथा पुराणों का आदर्श, भारतीय संस्कृति का संगोपन आवश्यक बन गया। मिथक के माध्यम से भारतीय संस्कृति, साहित्य रूप में धारावाहिक बनकर समाज में परिवर्तन लाने का प्रयास करने लगी। "मिथक का एक प्रधान गुण है, नाटकीयता। नाटकों को इससे ज्यादा फायदा पहुँचता रहा है। वर्तमान जीवन संदर्भोसे जुड़कर मिथक अपनी नयी प्रासंगिकता अर्जित कर रहे है, और इनके आधुनिक स्वरूप का विकास हो रहा है।"[31]

इसमें संदेह नहीं कि आजकल आधुनिक नाटककारोंने पुराने मिथकों के नयी व्याख्या की है। और पुराने मिथकों को नया अर्थ प्रदान किया है। इस संदर्भ में डॉ. शंभूनाथ का कथन समीचीन है -'आधुनिकता ने मिथक के अर्थ को अपनी तरफ मोड़ा। उसे आत्मकेंद्रित किया। दिर्घ अनुभवोंपर आधारित मध्यकालीन जीवनविधि के विघटन के बाद मिथक के अर्थ में संक्रमण होने लगा।'[32]

डॉ. लाल के मिथक नाटक इस दृष्टि से महत्व रखते हैं कि उन्होंने अपने ऐतिहासिक पौराणिक नाटकों में पुरातन मिथकों को आधुनिक मानव जीवन के संदर्भ में देखने का प्रयास किया है और मिथकोंकी नयी व्याख्या यथार्थ के धरातलपर प्रस्तुत की है, इसलिए उनके मिथक नाटक, नकि पौराणिक या ऐतिहासिक है बल्कि आधुनिक समाज का यथार्थ रूप में लेखाजोखा ही है, जिसका विवेचन अगले अध्यायों में विस्तार के साथ किया गया है।'

निष्कर्ष।

उपर्युक्त विवेचन से निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि -

1) मिथक शब्दप्रयोग अंग्रेजी ' मिथ ' का ही हिन्दी रूपांतरण है। मिथक से इतिहास, पुराण, पुराकथा आदि का ही बोध होता है, और उसमें लोकविश्वास प्रमुख रहता है। इसलिये मिथक किसी देश के जातीय संस्कृति के बोध है।

2) मिथक की उत्पत्ति के बारे में प्रकृति का सहयोग सर्वप्रमुख रहा है। प्राकृतिक वस्तुओं को देखकर ही आदिमानव ने मिथक की कल्पना की, जिसे आद्यबिंब कहा गया है।

3) मिथक का अन्यविज्ञानों से घनिष्ट संबंध है, जिनमें समाज विज्ञान, मनोविज्ञान, इतिहास, दर्शन, धर्म, भाषा आदि प्रमुख है।

4) मिथक और साहित्य का घनिष्ठ संबंध है। साहित्यकारों ने अपने साहित्य में मिथकों को महत्वपूर्ण स्थान दिया है, और पुराने मिथकों के आधुनिक जीवन सन्दर्भ में नयी व्याख्या करने का प्रयास किया है।

5) नाटक साहित्य की एक समृद्ध और प्रभावी विधा है। जिसमें आज के नाटककारों ने मिथकों का प्रयोग करके हिंदी नाट्य साहित्य की अभिवृद्धि की है। डॉ. लाल के मिथक नाटक इस दृष्टि से अपना विशेष महत्व रखते हैं।

अध्याय : ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1) मिथक और साहित्य - डॉ. नगेंद्र, पृ. 6, द्वि.सस्क., 1987.

2) वही - पृष्ठ 7

3) बृहत अंग्रेजी हिन्दी कोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृ. 1193, तृ. संस्क. 1985

4) नयी कविता में मिथक - डॉ. राजकुमार, पृ. 31, प्र. संस्क. 1989

5) हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथमाला - हजारी प्रसाद द्विवेदी खंड - 7, पृ. 85

6) मिथक और साहित्य - डॉ. नगेंद्र, पृ. 8, द्वि.संस्क. 1987.

7) मिथक : एक अनुशीलन - मालती सिंह, पृ. 12, प्र.संस्क., 1988.

9) मिथक और सहित्य - डॉ. नगेंद्र, पृ. 7, द्वि.संस्क 1987

10) आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीजशब्द - बच्चन सिंह, पृ. 77, प्र.संस्क, 1983.

11) मिथक उद्‌भव और विकास तथा हिन्दी साहित्य - डॉ. उषा पुरी, विद्या वाचस्पति, पृ. 36, प्र.संस्क, 1986.

12) भारतवाणी अंक - 45, संपादक - के.सी.सारंगमंठ, पृ. 10, (श्री नरेश मेहता के महाप्रस्थान में मिथक बोध - डॉ. गजानन सुर्वे का लेख)

13) मिथक और आधुनिक कविता - शंभूनाथ, पृ. 56, प्र.संस्क. - 1985.

14) वही, पृ. 45.

15) मिथक एक अनुशीलन - मालतीसिंह, पृ. 50, प्र.संस्क. 1988

16) मिथक उद्‌भव और विकास तथा हिन्दी साहित्य - डॉ. उषा पुरी, विद्या वाचस्पति, पृ. 11, प्र. संस्क. 1986.

17) मिथक एक अनुशीलन - मालती सिंह, पृ. 48, प्र.संस्क - 1988.

18) मिथकीय कल्पना और आधुनि काव्य - डॉ. जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव, पृ. 213, प्र.संस्क. 1985

19) वही, पृ. 261.

20) मिथक और आधुनिक कविता - शंभूनाथ, पृ. 83, प्र.संस्क - 1985.

21) मिथक और भाषा - सम्पा. प्रो. कल्याणमल लोढा, पृ. 252, प्र.संस्क, 1981.
(मिथक और यथार्थवाद - शंभुनाथ का लेख)

22) मिथक उद्‌भव और विकास तथा हिन्दी साहित्य - डॉ. उषा पुरी, विद्या वाचस्पति, प्राक्कथन, प्र.संस्क, 1986.

23) मिथक और साहित्य - डॉ. नगेंद्र, पृ. 42, द्वि.संस्क - 1987

24) मिथक और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक - रमेश गौतम, पृ. 20, प्र.संस्क, 1989.

25) मिथक : उद्‌भव और विकास तथा हिन्दी साहित्य - डॉ. उषा पुरी, विद्या वाचस्पति, पृ. 13, प्र.संस्क. 1983.

26) मिथक और भाषा - प्र. सम्पा. प्रो. कल्याणमल लोढा, पृ. 225, प्र.संस्क, 1981,
(आधनिक नाटकों का मिथक बोध - डॉ. सुव्रत लाहिडौका लेखा)

27) कोणार्क - जगदीशचंद्र माथुर - भूमिका - प्र.संस्क. 1976.

28) मिथक और स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक - रमेश गौतम, पृ. 29, प्र.संस्क, 1989

29) वहीं, पृ. 139

30) वहीं, पृ. 139

31) मिथक और भाषा - प्र.संम्पा. प्रो. कल्याणमल लोढ़ा, पृ. 222.
प्र. संस्क - 1981 (आधुनिक नाटकों का मिथकबोध - डॉ. सुव्रत लाहिडौ का लेख)

32) मिथक और आधुनिककविता - शंभुनाथ , पृ. 15, प्र.संस्क, 1985.